

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 27-07-18

स्वच्छ भारत मिशन में मोर्चा फतह जंग बाकी

परमेश्वरन अय्यर, (लेखक केंद्रीय पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय में सचिव हैं)



किसी एक मोर्चे पर जीत हासिल करना हमेशा युद्ध में जीत हासिल करने की तुलना में आसान होता है। स्वच्छ भारत मिशन की बात करें तो देश को खुले में शौच से मुक्त करने की लड़ाई एकदम सही दिशा में बढ़ रही है। देश के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता का दायरा अक्टूबर 2014 में इस मिशन की शुरुआत के वक्त के 39 प्रतिशत से बढ़कर आज 87 प्रतिशत हो गया है। खुले में शौच को समाप्त करने की दिशा में हम मोर्चा फतह करते हुए नजर आ रहे हैं लेकिन इसे स्थायी बनाए रखने की जंग अभी भी शुरुआती स्तर पर है। तय समय में पूरा किए जाने वाले अधिकांश

अभियानों के साथ काफी उत्साह जुड़ा होता है लेकिन समय के साथ उनका प्रभाव भी समाप्त होता नजर आता है। बहरहाल स्वच्छ भारत मिशन ग्रामीण के लक्ष्य कुछ अलहदा नजर आते हैं।

पहले के स्वच्छता अभियानों के विपरीत यह अपनी उपलब्धियों को लंबे समय तक कायम रखने का हिमायती है। अक्टूबर 2019 तक देश को पूरी तरह खुले में शौच से मुक्त बनाना इसका प्रमुख लक्ष्य है लेकिन इसकी एक योजना यह भी है वर्ष 2014 से 2019 के बीच लोगों के व्यवहार में जो बदलाव लाया गया है उसे आने वाले समय में बरकरार रखा जाए। खुले में शौच करने वालों की संख्या में भारी कमी आई है और अब 55 करोड़ से घटकर 15 करोड़ से भी कम रह गई है। यह अपने आप में बड़ी सफलता है लेकिन अंतिम लक्ष्य तब पूरा होगा जब खुले में शौच को लेकर ग्रामीण भारत के रुख को स्थायी रूप से बदला जा सके। मिशन ने बहुत तेज गति से प्रगति की है। करीब 4 लाख गांव और 400 जिलों को खुले में शौच से मुक्त घोषित किया जा चुका है। 13 राज्यों और 5 केंद्र शासित प्रदेशों ने भी खुले में शौच से मुक्त का दर्जा हासिल कर लिया है। हाल ही में आई राष्ट्रीय सालाना ग्रामीण स्वच्छता सर्वेक्षण (एनएआरएसएस) की रिपोर्ट इस बात की पुष्टि करती है कि स्वच्छ भारत मिशन-ग्रामीण यह सुनिश्चित करने में कामयाब रहा है कि कम से कम हर घर में शौचालय हो और लोग उसका इस्तेमाल करें।

शौचालयों का इस्तेमाल 93.40 फीसदी तक बढ़ गया है। एनएआरएसएस विश्व बैंक की एक परियोजना से संबंधित है। सर्वेक्षण में इस बात की भी दोबारा पुष्टि की गई है कि खुले में शौच मुक्त गांवों में से 95.6 फीसदी का दर्जा बरकरार है। खुले में शौच मुक्ति के अभियान को ध्यान में रखते हुए अब इस कार्यक्रम में पूरा जोर इस अभियान को स्थायित्व प्रदान करना है। खुले में शौच मुक्ति के स्थायित्व को अब अपने आप में एक उप मिशन का रूप दे दिया गया है। पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय ने हाल ही में राज्यों को इस संबंध में दिशानिर्देश जारी किए हैं। इन दिशानिर्देश की मदद से निरंतर ऐसी पहल की जा सकती हैं जो उन गांवों में व्यवहारगत बदलाव के लिए काम कर सकती हैं जिन्हें खुले में शौच से मुक्त घोषित किया जा चुका है। इन दिशानिर्देश में कहा गया है कि राज्यों को खुले में शौच से मुक्त घोषित

करने के बाद उन्हें स्थायित्व प्रदान करने की योजना बनाने के दौरान कई उपायों को ध्यान में रखने की बात कही गई है। इनमें मानव संसाधन को बरकरार रखने, क्षमता निर्माण की गतिविधियों से लेकर सहभागिता बढ़ाने की नीति अपनाने तथा स्थायित्व के लिए निजी निवेश जुटाने जैसी बातें शामिल हैं। कुछ राज्यों ने अपने स्तर पर उपयोजनाएं प्रस्तुत की हैं ताकि खुले में शौच मुक्ति को स्थायित्व प्रदान किया जा सके। उदाहरण के लिए महाराष्ट्र को हाल ही में खुले में शौच से मुक्त प्रदेश घोषित किया गया है।

राज्य ने संत गाडगे बाबा स्वच्छता अभियान नामक पुरस्कार योजना की शुरुआत की है। इसका सीधा संबंध शौचालयों के निरंतर प्रयोग से है। इसमें खुले में शौच की निगरानी, स्वच्छता को लेकर आम घरों की सहभागिता में वृद्धि और व्यक्तिगत साफ-सफाई की स्थिति में सुधार आदि शामिल हैं। खुले में शौच मुक्ति को स्थायित्व देने का एक अहम पहलू यह सुनिश्चित करना भी है कि शौचालय अच्छी गुणवत्ता और डिजाइन के हों। राज्यों को शौचालय निर्माण में गुणवत्ता और बेहतर डिजाइन अपनाने की सलाह के साथ-साथ स्वच्छाग्रहियों की मदद से लोगों के व्यवहार में बदलाव को लेकर निरंतर अभियान चलाने की बात भी कही गई है। गुणवत्ता की निगरानी के लिए भी अधिक सीधी प्रक्रिया अपनाई गई। पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय के अधिकारियों और सलाहकारों की टीम महीने में कम से कम दोबार जमीनी दौर करती है ताकि गुणवत्ता और व्यवहारगत बदलाव का आकलन किया जा सके। 28 महीने तक पद पर रहने के दौरान मैंने भी विभिन्न राज्यों में 110 यात्राएं कीं। पड़ोसी मुल्क बांग्लादेश ने कुछ वर्ष पहले अपने दम पर स्वच्छता क्रांति की और पूरे देश को खुले में शौच मुक्त घोषित किया गया। बहरहाल, आज बांग्लादेश के सामने इसे स्थायी रखने की भारी चुनौती है। एकल पिट वाले कई शौचालय नाकाम हो चुके हैं।

यह हमारे लिए भी एक बड़ा सबक है। हमारे यहां देश के अधिकांश हिस्सों में स्वच्छ भारत मिशन में दो पिट वाली शौचालय तकनीक अपनाई जा रही है। फिर भी बांग्लादेश का सबक हमें याद दिलाता है कि निर्माण की गुणवत्ता की निरंतर निगरानी करनी आवश्यक है। उससे भी अहम बात यह है कि लोगों के व्यवहार में आने वाले बदलाव और शौचालय इस्तेमाल करने की हालिया विकसित आदत को स्थायी बनाए रखा जाए। पुराने व्यवहार का दोहराव न हो यह सुनिश्चित करने के लिए हमें निरंतर प्रयास करने होंगे। स्थानीय समुदायों और सरकारों को व्यवहार में स्थायी बदलाव को प्रोत्साहित करने वाले कदम उठाने होंगे। इस वर्ष 2 अक्टूबर को स्वच्छ भारत मिशन की चौथी वर्षगांठ होगी। इस अवसर पर देश में स्वच्छता को लेकर नीतिगत स्तर का एक बड़ा आयोजन होने वाला है। दुनिया के करीब 80 देशों के स्वच्छता मामलों के मंत्री, वैश्विक स्वच्छता विशेषज्ञ, बहुपक्षीय और द्विपक्षीय एजेंसियों के शीर्ष प्रतिनिधि, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय परोपकारी तथा स्वच्छता कार्यकर्ता इस अवसर पर दिल्ली में आयोजित महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय स्वच्छता सम्मेलन में हिस्सा लेंगे। सम्मेलन में स्वच्छ भारत अभियान-ग्रामीण को लेकर भारत का अनुभव साझा किया जाएगा। इसके अलावा हमें अन्य देशों के अनुभवों से भी सीखने को मिलेगा। हम स्वच्छ भारत मिशन के अंतिम वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। ऐसे में यह अहम है।

Date: 26-07-18

Live
हिन्दुस्तान
.com

ऊर्जा सुरक्षा के लिए अहम है अफ्रीका

हर्ष वी पंत, (प्रोफेसर किंग्स कॉलेज, लंदन)



प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अफ्रीका यात्रा की शुरुआत रवांडा से हुई, जिसके बाद वह युगांडा पहुंचे और फिर दक्षिण अफ्रीका। अभी वह ब्रिक्स (ब्राजील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका का संगठन) के 10वें शिखर सम्मेलन में शिरकत कर रहे हैं, जो दक्षिण अफ्रीका के जोहानिसबर्ग में चल रहा है। प्रधानमंत्री मोदी का यह दौरा खासा महत्वपूर्ण है। वह रवांडा पहुंचने वाले पहले भारतीय शासनाध्यक्ष तो हैं ही, युगांडा की संसद को संबोधित करने वाले प्रथम भारतीय प्रधानमंत्री भी हैं। स्पष्ट है कि उनके नेतृत्व में भारतीय हुकूमत अफ्रीका महाद्वीप

के साथ अपने पारंपरिक संबंधों को कहीं अधिक मजबूती दे रही है। अफ्रीका से हमारा सदियों पुराना नाता है। माना जाता है कि पूरे अफ्रीका में दस लाख के करीब भारतीय प्रवासी हैं।

अफ्रीका के साथ हमारा यह रिश्ता साझा औपनिवेशिक विरासत और स्वतंत्रता के बाद विकास-कार्यों के साझे अनुभव से बना है। 1947 में आजादी मिलने के बाद उपनिवेशवाद व नस्लवाद विरोधी मुहिमों में भारत की उल्लेखनीय भूमिका को देखकर अफ्रीकी देशों से हमारी निकटता बढ़ी है। भारत भी उन देशों में शुमार था, जिसने दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद-नीति का मुखर विरोध किया था। प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के समय तो नई दिल्ली ने एशियाई-अफ्रीकी रिश्ते की जबर्दस्त तरफदारी की थी। शीत युद्ध के दौरान वैश्विक राजनीति से किनारे होने के बाद भी भारत ने अफ्रीकी राज्यों की आजादी का पुरजोर समर्थन किया था और दक्षिण-दक्षिण सहयोग की वकालत की, ताकि वैश्विक राजनीति और आर्थिक व्यवस्था में व्याप्त विषमता को चुनौती दी जा सके। हालांकि, इन सबके बाद भी अफ्रीका में भारत की वास्तविक उपस्थिति मामूली ही रही। अच्छी बात है कि शीत युद्ध के खात्मे और अफ्रीका में चीन की बढ़ती मौजूदगी को देखते हुए अब हम अफ्रीकी महाद्वीप के साथ अपने रिश्तों को फिर से गढ़ने में जुट गए हैं। शीत युद्ध की समाप्ति ने भारत को ऐसे तमाम अवसर दिए हैं कि वह अलग तरीके से अफ्रीका के साथ अपने संबंध आगे बढ़ाए। भारत के सामने कई नई चुनौतियां रही हैं। देश के तेज आर्थिक विकास को नए बाजारों और नए संसाधनों की दरकार रही है। ऐसे में, अफ्रीका के साथ मजबूत आर्थिक संबंध हमारे लिए जरूरी बन जाता है। ऊर्जा सुरक्षा के लिए तो अफ्रीका की भूमिका उल्लेखनीय रूप से बढ़ रही है।

भारत अब अफ्रीका पर निरंतर ध्यान दे रहा है। हम इस महाद्वीप पर अपना राजनयिक मिशन तो खोल ही रहे हैं, लगातार उच्च स्तरीय कूटनीतिक व राजनीतिक वार्ता भी जारी है। भारत उन अफ्रीकी देशों को आसान शर्तों पर कर्ज का भरोसा दे रहा है, जो हमारे साथ कारोबार को इच्छुक हैं। शिक्षा, रेल-विकास और शांति अभियानों में भी हम लगातार अपना योगदान दे रहे हैं। भारत ने अफ्रीका को दी जाने वाली इमदाद काफी बढ़ा दी है। नतीजतन, उसके साथ हमारा

रिश्ता काफी व्यापक हो चला है। अब यह मानव संसाधन व संस्थागत क्षमता-निर्माण पर केंद्रित हो गया है। परस्पर सहयोग और तकनीकी मदद के माध्यम से अफ्रीकी देशों के विकास में मदद की जा रही है और उनके साथ आर्थिक और कारोबारी रिश्ते बढ़ाए जा रहे हैं। भारतीय नौसेना सोमालिया के तट पर समुद्री डाकुओं से निपटने में भी अफ्रीका का साथ दे रही है। हमारे नौसैनिक हिंद महासागर में गश्त करते हैं और एक्सक्लूसिव इकोनॉमिक जोन (ईईजेड) की निगरानी करके पूर्वी व दक्षिण अफ्रीकी देशों की मदद कर रहे हैं।

व्यापार संतुलन भी अफ्रीका के पक्ष में है, क्योंकि अफ्रीकी देश भारत से आयात करने की बजाय अधिक निर्यात करते हैं। यह 2008 में कम विकसित देशों के लिए शुरू किए गए शुल्क-मुक्त टैरिफ अधिमान (डीएफटीपी) का नतीजा है, जिससे 33 अफ्रीकी देशों को फायदा पहुंचा है। अफ्रीका के साथ भारत 'विकासपरक साझेदारी' का हिमायती है। ऐसा होने से भारत उन शर्तों से खुद को अलग कर सकेगा, जिन सिद्धांतों के आधार पर आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) के सदस्य विदेशी सहायता पाने वाले देशों के साथ रिश्ता रखते हैं। हालांकि चीन की सरकारी स्वामित्व वाली कंपनियों की तुलना में अफ्रीकी बाजारों की अच्छी समझ रखने के बावजूद भारत की निजी कंपनियां अफ्रीका द्वारा उपलब्ध कराए गए अवसरों का पूरा फायदा नहीं उठा सकी हैं। तकनीकी और आर्थिक सहयोग (आईटीईसी) कार्यक्रम के तहत भारत वहां एक अरब अमेरिकी डॉलर से अधिक का निवेश कर रहा है और लोगों को तकनीकी प्रशिक्षण दे रहा है। अफ्रीकन कपैसिटी बिल्डिंग फाउंडेशन (एसीबीएफ) के पूर्ण सदस्य के रूप में हमने सतत विकास, गरीबी उन्मूलन और क्षमता निर्माण कार्यक्रमों के लिए दस लाख अमेरिकी डॉलर देने का भरोसा दिया है।

अफ्रीका में ई-नेटवर्क की विषमता को पाटने के लिए भी भारत ने 10 करोड़ अमेरिकी डॉलर का निवेश किया है। हमारी सैन्य अकादमियां तो कई अफ्रीकी देशों के सैन्य अधिकारियों को प्रशिक्षण देती ही रहती हैं। यह सही है कि हम कुछ पूर्वी अफ्रीकी देशों के साथ धनिष्ठ संबंध को पर्याप्त तवज्जो देते रहे हैं, पर दक्षिणी और पश्चिमी अफ्रीकी देशों तक अपना विस्तार करने के लिए हम व्यवहार कुशल तरीकों से निवेश भी कर रहे हैं। पूरे अफ्रीका तक पहुंच बढ़ाने के लिए भारत-अफ्रीका समिट का आयोजन किया जाता है। इन सम्मेलनों में सहयोग समझौतों पर बनने वाली सहमति और निवेश बढ़ाने के लिए की जाने वाली पहल यही बताती है कि नई दिल्ली और अफ्रीकी महाद्वीप के बीच मजबूत भागीदारी बढ़ाने को लेकर भारत संकल्पित है। अफ्रीकी महाद्वीप में पर्याप्त संख्या में मौजूद प्रवासी भारतीयों ने भी इस भागीदारी को उल्लेखनीय गति दी है। अपनी मौजूदा अफ्रीका यात्रा में प्रधानमंत्री मोदी अफ्रीका को लेकर भारत की प्रतिबद्धता दोहराते दिख रहे हैं। वह समझ रहे होंगे कि चीन के शासनाध्यक्ष शी जिनपिंग की नजर भी अफ्रीका पर है। ऐसे में, यदि वह भारत-अफ्रीका रिश्ते को एक नई ऊंचाई तक ले जाना चाहते हैं, तो नई दिल्ली को उन तमाम वादों को जमीन पर उतारना ही होगा, जो उसने अफ्रीका से किए हैं।

Date: 26-07-18

राष्ट्रीय सहारा

मुस्तैदी की दरकार

बैंकों का संकट

उपेन्द्र प्रसाद

अपने दो सौ सालों के इतिहास में भारत की आधुनिक बैंकिंग व्यवस्था आज ऐसे मुकाम पर खड़ी है, जहां उसे चारों ओर चुनौतियां ही चुनौतियां दिखाई पड़ रही हैं। भारत की स्थिरतावादी शक्तियां या कहें कि लोगों के खास मिजाज का ही नतीजा है कि इन चुनौतियों के बीच भी हमारे बैंक अपनी विश्वसनीयता बनाए हुए हैं। कोई पश्चिमी देश होता तो उसकी बैंकिंग व्यवस्था इतनी चुनौतियों के बीच ढह जाती लेकिन भारतीय अर्थव्यवस्था या कहिए समाज में ही एक ताकत है, जिसके कारण बड़ा से बड़ा संकट भी हमें अस्थिर नहीं कर पाता। समस्याग्रस्त भारतीय बैंकों को इसी का लाभ मिल रहा है। अब यह हमारे नीति निर्माताओं के अर्थ कौशल पर निर्भर करता है कि बैंकों को दरपेश अभूतपूर्व संकट को कैसे दूर करें। असली समस्या सरकारी बैंकों में है जो एनपीए (नॉन परफॉर्मिंग एसेट्स) की समस्या से जूझ रहे हैं।

इनमें लोगों का विास इसलिए बना हुआ है, क्योंकि ये सरकारी हैं और सरकार बुरे लोन की समस्या से जूझ रहे बैंकों को अपने खजाने से समर्थन कर रही है। इसी सिलसिले में सरकार ने 5 बैंकों को 11 हजार करोड़ रुपये से ज्यादा उपलब्ध कराने की घोषणा की है। इन पांच बैंकों में पंजाब नेशनल बैंक भी शामिल है, जो मेहुल चौकसी और नीरव मोदी के कारण 10 हजार करोड़ रुपये से भी ज्यादा की चपत खा चुका है। सरकार ने पिछले वित्तीय वर्ष में भी बैंकों को एक लाख करोड़ रुपये की सहायता की थी। तब यह सवाल उठा था कि उन बैंकों की गैर-जिम्मेदारी का खमियाजा टैक्स अदा करने वाली जनता क्यों भुगतें? एक बार फिर सरकारी खजाने से उन्हें वित्त पोषित किए जाने के बाद इसी तरह के सवाल उठ सकते हैं, लेकिन नहीं भूलना चाहिए कि उन बैंकों में पैसा उन्हीं का जमा है, जो टैक्स भी देते हैं। अभी तो उन बैंकों का पैसा डूबा है। यदि बैंक ही डूब गए तो फिर उन लोगों का पैसा भी डूब जाएगा जिन्होंने उनमें अपने पैसे जमा कर रखे हैं। लेकिन यह भी सच है कि सरकार अपने खजाने से बैंकों को लगातार पैसे नहीं दे सकती।

उनकी समस्याओं का स्थायी हल ढूंढना होगा। सरकारी खजाने से उन्हें धन देने के अलावा सरकार ने अन्य अनेक उपाय भी किए हैं। इसके लिए विशेष दिवालिया कानून भी बनाया है, जिससे बैंकों को कुछ राहत मिलती दिखाई पड़ रही है। भूषण स्टील से संबंधित मामले में पंजाब नेशनल बैंक को दिवालिया कानून का लाभ मिला भी और उसके बाद उम्मीद जगी थी कि बैंक एक साल के अंदर शायद अपना डूबा हुआ एक लाख करोड़ वापस पा लें। हमारे देश की समस्या यह है कि कानून आसानी से लागू नहीं होते। कानूनी कार्रवाई तेजी से होने में भी अड़चनें आ जाती हैं। कानूनी लूपहोल्स का ही निहित स्वार्थ न केवल लाभ उठाते हैं, बल्कि न्याय प्रक्रिया की सुस्ती का भी उन्हें फायदा होता है। यही कारण है कि जिस तेजी से बैंकों में फ्रॉड हो जाता है, उतनी तेजी से फ्रॉड करने वालों के खिलाफ कार्रवाई नहीं हो पाती। दिवालिया कानून के रास्ते में भी इस तरह की समस्याएं देखने को मिल रही हैं। वैसे तो एनपीए की समस्या से लगभग सभी सरकारी बैंक जूझ रहे हैं, लेकिन कुछ कमजोर बैंकों के सामने कुछ ज्यादा ही कठिनाइयां हैं।

इसलिए एक विकल्प यह भी है कि कमजोर और छोटे बैंकों को मजबूत और बड़े बैंकों में विलीन कर दिया जाए। केंद्र सरकार ने इस दिशा में आगे बढ़ने का फैसला भी किया है, और इसके लिए भारतीय रिजर्व बैंक को आगे की कार्रवाई करने को भी कहा है। मोदी सरकार के गठन के बाद भारतीय स्टेट बैंक में उसके अनुषंगी कुछ बैंकों का विलय भी हुआ है। वे विलय सफल भी रहे हैं। यूपीए सरकार ने एक महिला बैंक भी बनाया था। उस महिला बैंक का भी भारतीय स्टेट बैंक में विलय हो चुका है। लेकिन भारतीय स्टेट बैंक में उन बैंकों के विलय की सफलता से कोई ज्यादा उत्साहित होने की जरूरत नहीं है, क्योंकि ये विलय एनपीए की समस्या को हल करने के लिए नहीं थे। वे बैंक एसबीआई के अनुषंगी बैंक थे और बेहतर संचालन और खर्च कम करने के उद्देश्य से उनका विलय किया गया था। लेकिन अब जो विलय होगा तो उसमें कमजोर बैंकों की कमजोरी का भी विलय होगा और खतरा यह होगा कि मजबूत बैंक भी उसी समस्या से ग्रस्त हो सकता है, जो कमजोर बैंक में थी। यही कारण है कि विलय की दिशा में भारतीय रिजर्व बैंक और भारत की सरकार को फूंक-फूंक कर कदम उठाना होगा।

सही अध्ययन करना होगा ताकि सतर्क रहा जा सके कि विलय के कारण कहीं लाभ होने के बदले नुकसान तो नहीं हो जाएगा। कौन-सा बैंक किस बैंक में विलीन किया जाए इसका निर्णय करने में समय लगेगा। यही कारण है कि यह कहने में जितना आसान लगता है, करने में उतना आसान नहीं है, और इसमें दो साल से 5 साल तक लग सकते हैं। सरकारी खजाने से बैंकों का वित्त पोषण किया जाना और कमजोर बैंकों को मजबूत बैंकों में मिला दिया जाना समय की जरूरत हो सकती है, लेकिन जिनके कारणों से भारत की बैंकिंग व्यवस्था आज संकटग्रस्त हो गई है, उन कारणों का इलाज करना भी जरूरी है। आखिर बैंकों की यह हालत हुई क्यों? 2008 में जब पूरी दुनिया आर्थिक मंदी की शिकार थी, तो भारत उसका अपवाद था। दुनिया का आर्थिक संकट अमेरिकी बैंकों में शुरू हुए संकट का नतीजा था, लेकिन भारत के बैंकों तक वह संकट नहीं पहुंच पाया।

हमारे बैंक उस समय हमारी अर्थव्यवस्था को ताकत प्रदान कर रहे थे। लेकिन आज यह स्थिति क्यों पैदा हो गई है? तो उसका एक कारण 2008 का वह विश्वव्यापी अर्थ संकट भी है। उस समय उद्योगों को विशेष पैकेज दिए गए थे। उनमें ब्याज दरों में कमी भी शामिल थी। उस कमी से उद्योगों को तो हजारों करोड़ों का फायदा हुआ लेकिन बैंकों को नुकसान ही हुआ। उसके कुछ समय बाद ही 2 जी घोटाला भी सामने आया। घोटालेबाजों ने बैंकों से हजारों करोड़ों के लोन ले रखे थे। उनके लाइसेंस कोर्ट द्वारा रद्द किए जाने से बैंकों के भी हजारों करोड़ रुपये फंस गए। कोयला घोटाले और उसके बाद के अदालती आदेशों के कारण भी बैंकों के एनपीए बढ़े। और वह बुलबुला मोदी सरकार के कार्यकाल में फूट गया। बैंकों में हुए कुछ घोटालों ने भी मामले को संगीन कर दिया। मोदी सरकार को जिस मुस्तैदी और कुशलता से उस संकट को दूर करना चाहिए था, उसका अभाव दिखाई पड़ा। लेकिन समस्या है, तो उसे हल करना ही होगा।

Date: 26-07-18

भ्रष्टाचार के विरुद्ध कानून

संपादकीय

भ्रष्टाचार निरोधक (संशोधन) विधेयक, 2018 का लोक सभा में ध्वनिमत से पारित होना स्वागत योग्य है। चूंकि राज्य सभा इसे पहले ही पारित कर चुकी है, इसलिए राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के साथ यह कानून बन जाएगा। बदलते समय और भ्रष्टाचार के बढ़ते और बदलते आयामों के बीच 1988 के भ्रष्टाचार निवारण कानून का संशोधन आवश्यक हो गया था। इसमें रिश्वत लेने वाले के साथ-साथ देने वाले के लिए भी सजा के प्रावधान हैं तथा भ्रष्टाचार से जुड़े मामलों के दो साल में निपटारा करने की भी बाध्यता है। हालांकि इस विधेयक ने अपने जन्म से छह वर्ष के लंबे दौर के बाद कानून का रूप अख्तियार किया है। यूपीए सरकार में 2012 में पेश विधेयक का राजग सरकार के कार्यकाल के अंतिम दौर में पारित होना बहुत कुछ कहता है। किंतु संतोष इस बात का है कि अंततः 4 संशोधनों के साथ यह अपने तार्किक निष्कर्ष तक पहुंच गया।

जो लोग खुद काली कमाई के लिए रिश्वत देते हैं, उनको लेने वाले के समान दोषी मानने में हर्ज नहीं है, लेकिन आम आदमी को कई बार रिश्वत मजबूरी में देनी पड़ती है। इसमें रिश्वत देने वाले के लिए अधिकतम सात वर्ष की सजा या जुर्माने या दोनों का प्रावधान किया गया है जबकि रिश्वत लेने वाले के लिए न्यूनतम तीन वर्ष तथा अधिकतम सात वर्ष की सजा और जुर्माने का प्रावधान। यह प्रावधान थोड़ा भयभीत करता है। कहीं हमें सजा न हो जाए इस डर से रिश्वत देने वाले अनेक लोग शिकायत ही नहीं करेंगे। हालांकि इसमें उसके बचाव के लिए एक प्रावधान है। रिश्वत देने वाले को यह बताना होगा कि किस वजह से और किन परिस्थितियों में रिश्वत दी गई। अगर यह साबित हो गया कि उसे रिश्वत देने के लिए मजबूर किया गया तो वह सजा से बच सकता है।

इसमें लोक सेवकों पर भ्रष्टाचार का मामला चलाने से पहले लोकपाल और राज्यों के मामले में लोकायुक्तों से अनुमति लेने का प्रावधान किया गया है। सेवानिवृत्त लोक सेवकों को भी यह संरक्षण दिया गया है। यह ईमानदार अधिकारियों के संरक्षण के लिए किया गया है। ईमानदार अधिकारियों के संरक्षण में समस्या नहीं है। किंतु क्या इसका लाभ बेईमान भी नहीं उठा लेंगे। अंततः मामलों का फैसला तो न्यायालय को ही करना है। अगर वह लगातार सुनवाई करके कानून में वर्णित अपेक्षाओं के अनुरूप दो वर्ष में फैसला कर देता है, तो दोषियों के लिए न्यायिक प्रक्रिया के विलंब का लाभ मिलना संभव नहीं होगा और निदरेष को लंबे समय तक न्यायालय का चक्कर नहीं लगाना होगा।

Date: 26-07-18



India's Magna Carta

Marking the 100th year of the Montagu-Chelmsford Report

Manuraj Shunmugasundaram, (The writer is an advocate, and spokesperson of the DMK)

This month marks the 100th year of the publication of the 'Report on Indian constitutional reforms', commonly known as the Montagu-Chelmsford Report (MCR). Edwin Montagu, then Secretary of State for India, had advocated for increased participation of Indians in the British Indian administration and had begun consultations nearly a year earlier. After many meetings with Indian representatives, Montagu and the then Governor-General, Lord Chelmsford, published the MCR on July 8, 1918. The MCR stands out for proposing some of the most radical administrative changes and for giving provincial legislatures the mantle of self-governance.

To this extent, the report advocated the need "to emancipate the local governments and legislatures from central control; and to advance, by successive stages, in the direction of conferring responsible government on the provinces." The Montagu-Chelmsford Committee visited Madras Presidency to gather the views of political leaders. T. Varadarajulu Naidu's book, Justice Movement 1917, informs us that senior members of the Justice Party led by Sir Pitti Theagaraya met the Committee and made extensive demands, which included the "creation of municipalities and local body institutions with sufficient autonomy to handle their local issues... bereft of the intrusive control of the Government."

They further demanded that administration of the Presidency be eventually moved to the local legislature. To this end, they suggested that departments in administration be placed under the control of legislatures. Ultimately, the MCR established the framework for devolution of powers and gave credence to the cry for self-governance. This cannot come as a surprise because the report recommended that "the Provinces are the domain in which the earlier steps towards the progressive realisation of responsible government should be taken". Another one of the most far-reaching objectives of the report was to elucidate the principle of accountable governance by directing that the "Government of India must remain wholly responsible to Parliament."

Thus was laid the platform for the development of a responsible government. However, in the 32nd session of the Indian National Congress, led by British theosophist Annie Besant, there was strong opposition to the Montagu declaration as something that "was unworthy of England to offer and India to accept." However, Besant later accepted the reforms as essential for the progress of British India. The MCR would go on to become the basis for the Government of India Act, 1935, and, ultimately, the Constitution. The key principles of responsible government, self-governance and federal structure grew out of these reforms. The MCR on Indian constitutional reforms along with the Montagu Declaration are, thus, worthy claimants of the title of the Magna Carta of modern India.
